गीतासार क्या है?

धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र में भगवान श्री कृष्ण ने अपने नित्य सखा श्री अर्जुन को शोकमुक्त करने के बहाने से अध्यात्म ज्ञान की गंगा बहा दी थी, उस अध्यात्म ज्ञान गंगा को श्रीमद्भगवद्गीता कहते हैं। समस्त वेदों का सार 'वेदान्त या उपनिषद्' कहलाता है और समस्त उपनिषदों के सार को श्रीमद्भगवद्गीता या ''गीता'' कहते हैं। गीता में 18 अध्याय और 700 श्लोक हैं।

गीता में भगवान श्री कृष्ण ने अनेक योगों का निरूपण किया है; किन्तु इन समस्त योगों में सर्वश्रेष्ठ योग को 'भक्ति' के नाम से सूचित किया है। साथ ही श्री कृष्ण ने अपने को बारम्बार सर्वशक्तिमान परमेश्वर या परम भगवान के रूप में घोषित किया है। अतः सम्पूर्ण गीता का सार हुआ—''श्री कृष्ण ही परम भगवान हैं और श्री कृष्ण भक्ति ही सर्वश्रेष्ठ योग है।''

प्रस्तुत संकलन का नाम गीतासार है, जिसमें इन दोनों विषयों को ही संग्रहित किया गया है।

संकलनकर्तृ :

भागवत विदुषी शैलवासिनी देवी दासी

श्रीभगवानुवाच (भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा):

1. ***इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।***
विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्॥

(गीता 4–1)

इस अविनाशी भक्तियोग शास्त्र (श्रीमद्भगवद्गीता) का उपदेश मैंने सूर्यदेव को दिया था, सूर्यदेव ने स्वायंभुव मनु को दिया और स्वायंभुव मनु ने महाराज इक्ष्वाकु को दिया था।

2. ***एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः।***
स कालेनेह महता योगो नष्टः परन्तप॥

(गीता 4–2)

इस प्रकार राजर्षियों ने गुरु–शिष्य परम्परा द्वारा इस गीता शास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया। किन्तु हे परन्तप (शत्रुविजेता अर्जुन)! कालान्तर में यह महान भक्तियोग शास्त्र विलुप्त हो गया।

3. ***स एवायं मया तेऽद्य योग: प्रोक्त: पुरातन:।***
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम्॥

(गीता 4–3)

मेरे द्वारा उसी पुरातन भक्तियोग शास्त्र का उपदेश आज तुम्हें प्रदान किया जा रहा है। और मैं तुम्हें यह उत्तम रहस्यमयी ज्ञान इसीलिए प्रदान कर रहा हूँ, क्योंकि तुम मेरे सख्य भाव के भक्त हो।

4. ***अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।***
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया॥

(गीता 4–6)

यद्यपि मैं अजन्मा और अविनाशी हूँ और समस्त जीवधारियों का परमेश्वर हूँ, तथापि मैं अपनी त्रिगुणात्मिका प्रकृति को अपने अधीन रखते हुए ही अपनी योगमाया द्वारा अपने मूल सच्चिदानन्दस्वरूप में संसार में प्रकट होता हूँ।

5. ***भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम्।***
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति॥

(गीता 5–29)

मुझे समस्त यज्ञों व तपस्याओं के भोक्ता, समस्त लोकों के परमेश्वर और समस्त जीवधारियों के शुभचिन्तक रूप में जान लेने पर ज्ञाता को शान्ति प्राप्त होती है।

6. ***योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना।***
श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः॥

(गीता 6–47)

समस्त प्रकार के योगियों में से जो योगी अपने अंतःकरण में मेरा चिन्तन करता हुआ श्रद्धापूर्वक मेरी भक्ति करता है, वही मेरे द्वारा सर्वश्रेष्ठ योगी माना जाता है।

7. ***मनुष्याणां सहस्त्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।***
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः॥

(गीता 7–3)

सहस्त्रों मनुष्यों में से कोई एक भगवत्प्राप्ति के लिए यत्न करता है और ऐसे अनेक यत्नकर्ताओं में से भी कोई एक भगवत्प्राप्ति करता है। इन भगवत्प्राप्ति कर चुके भक्तों में से भी कोई विरला ही मुझे तत्त्व से जान पाता है।

8. ***मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चिदस्ति धनञ्जय।***
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव॥

(गीता 7–7)

हे धनञ्जय! मुझसे बढ़कर कोई भी नही, कुछ भी नहीं। सूत्र में पिरोये गए मोतियों की भाँति यह सम्पूर्ण जगत मुझ पर आश्रित है।

9. ***दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।***
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते॥

(गीता 7–14)

मेरी प्रबल त्रिगुणात्मिका दैवी माया से पार होना अत्यंत दुष्कर है, किन्तु जो मेरी ही शरण ग्रहण करते हैं; वे इस दुर्लंघ्या माया को सरलता से पार कर लेते हैं।

10. ***बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।***
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥

(गीता 7–19)

ब्रह्मज्ञानी व्यक्ति बहुत जन्मों के उपरान्त मेरी शरणागति में आता है। वह महात्मा सुदुर्लभ होता है जो मुझ वासुदेव श्रीकृष्ण को ही सर्वेसर्वा मानता है।

11. ***नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।***
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्॥

(गीता 7–25)

योगमाया से आवृत रहने से मैं सबके समक्ष अपनी भगवत्ता प्रकाशित नहीं करता, इसीलिए मूर्ख सांसारिक व्यक्ति मुझे अजन्मा व अविनाशी भगवान के रूप में नहीं जान पाते।

12. ***वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन।***
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन॥

(गीता 7–26)

हे अर्जुन! मैं समस्त जीवों के भूत, वर्तमान व भविष्य को जानता हूँ, किन्तु मुझे कोई नहीं जानता।

13. ***अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।***
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः।

(गीता 8–5)

जो मृत्यु के समय मेरा ही स्मरण करते हुए देह का त्याग करते हैं, वे मेरे परमधाम को प्राप्त हाते हैं; इसमें कोई संशय नहीं है।

14. ***अनन्यचेता: सततं यो मां स्मरति नित्यश:।***
तस्याहं सुलभ: पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिन:॥

(गीता 8–14)

हे पार्थ! जो सदैव अनन्य भाव से मेरा निरन्तर स्मरण करता है, ऐसे नित्य सेवा परायण भक्त के लिए मैं सुलभ हूँ।

15. ***आब्रह्मभुवनाल्लोका: पुनरावर्तिनोऽर्जुन।***
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते॥

(गीता 8–16)

हे अर्जुन! पाताल से लेकर ब्रह्मलोक तक सभी लोकों में आवागमन है, किन्तु हे कौन्तेय! जो मुझे प्राप्त कर लेता है; उसका पुनर्जन्म नहीं होता।

16. ***अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहु: परमां गतिम्।***
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम॥

(गीता 8–21)

जिस परम गन्तव्य को अप्रकट और अविनाशी कहा जाता है और जिसे प्राप्त कर लेने पर वापस लौटना नहीं पड़ता, वही मेरा परमधाम है।

17. ***अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्।***
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्॥

(गीता 9–11)

मैं समस्त प्राणियों का परमेश्वर हूँ, मेरी इस परम भगवत्ता को न जानने के कारण मूर्ख व्यक्ति मेरी नराकृति का उपहास करते हैं।

18. ***सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रता:।***
नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते॥

(गीता 9–14)

यत्नपूर्वक व दृढ़ निश्चय के साथ मेरा सतत कीर्तन करो, भक्तिपूर्वक मुझे प्रणाम करो और सदैव मेरे आश्रित रहकर मेरी पूजा करो।

19. ***अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जना: पर्युपासते।***
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

(गीता 9–22)

जो व्यक्ति मेरा अनन्य चिन्तन करते हुए मेरी सम्यक् उपासना करते हैं, ऐसे अपने नित्य सेवा परायण भक्तों का योगक्षेम (अभाव की पूर्ति व प्राप्त वस्तु की रक्षा) मैं स्वयं वहन करता हूँ।

20. ***यान्ति देवव्रता देवान् पितॄन् यान्ति पितृव्रता:।***
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्॥

(गीता 9–25)

देवताओं के उपासक देवलोक जाते हैं, पितरों के उपासक पितृ लोक जाते हैं, भूतों के उपासक भूत बनते हैं और मेरे भक्त मेरे परमधाम को प्राप्त करते हैं।

21. ***यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम्।***
असम्मूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

(गीता 10–3)

जो मुझे अजन्मा, अनादि और सब लोकों के परमेश्वर के रूप में जान लेता है, वही मनुष्यों में ज्ञानी है और वही समस्त पापों से मुक्त है।

22. ***अहं सर्वस्य प्रभवो मत्त: सर्वं प्रवर्त्तते।***
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विता:॥

(गीता 10–8)

मैं सबका उत्पत्ति स्त्रोत हूँ और मेरे द्वारा ही सब अपने–अपने कार्यों में प्रवृत्त होते हैं। बुद्धिमान जन मेरे विषय में यही मानकर समर्पणभाव युक्त होकर मेरा भजन करते हैं।

23. ***मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्त: परस्परम्।***
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च॥

(गीता 10–9)

मेरे भक्तों के मन मुझमें आसक्त रहते हैं, उनके जीवन मेरी सेवा के लिए समर्पित होते हैं, वे परस्पर मेरे दिव्य ज्ञान का ही आदान–प्रदान करते रहते हैं और वे सदैव मेरी कथाएँ कहते हुए ही आत्मसंतुष्टि व आनन्द का अनुभव करते हैं।

24. ***तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।***
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते॥

(गीता 10–10)

मैं अपने उन भक्तों को प्रेमा भक्ति प्रदान करता हूँ, जो निरन्तर प्रसन्नतापूर्वक मेरी साधन भक्ति करते रहते हैं; ऐसी प्रेमा भक्ति के द्वारा वे मुझे प्राप्त कर लेते हैं।

25. ***तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः।***
नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता॥

(गीता 10–11)

अपने ऐसे प्रेमी भक्तों पर अनुकम्पा करने के लिए मैं उनके हृदयों में प्रकट होकर अनुभूति ज्ञान का दीपक प्रज्ज्वलित करके अज्ञानजन्य अन्धकार का नाश कर देता हूँ।

(चतुःश्लोकी गीता पाठ का महत्त्व)

भगवद्गीता के दशम अध्याय के 8,9,10 और 11 ये चार श्लोक सम्पूर्ण गीता का सार माने जाते हैं। इन श्लोकों में गीता शास्त्र के प्रतिपाद्य विषयों भक्ति, भक्त और भगवान का निरूपण है। इन श्लोकों का नित्य पाठ करने से भगवान श्रीकृष्ण की परम अनुकम्पा प्राप्त होती है।

26. ***अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन।***
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्॥

(गीता 10–42)

किन्तु हे अर्जुन! मेरी विभूतियों के विस्तृत ज्ञान की आवश्यकता ही क्या है? मैं तो अपने एक पूर्णांश मात्र (श्रीविष्णु) के द्वारा ही सम्पूर्ण जगत में व्याप्त होकर, इसे धारण करता हूँ।

27. ***भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन।***
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप॥

(गीता 11–54)

हे परन्तप अर्जुन! केवल मेरी अनन्य भक्ति के द्वारा ही मेरा तत्त्व ज्ञान व मेरा साक्षात् दर्शन सम्भव है और इसी विधि से मेरे परमधाम में प्रवेश भी सम्भव है।

28. ***मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।***
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशय:॥

(गीता 12–8)

अपना मन मुझमें स्थिर करो और अपनी बुद्धि भी मुझमें ही लगाओ। इस प्रकार तुम इस जीवन के पश्चात् निश्चित रूप से मेरे परमधाम में ही निवास करोगे, इसमें कोई संशय नहीं है।

29. ***मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।***
स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते॥

(गीता 14–26)

जो मेरी अव्यभिचारिणी (अनन्य) भक्तिमयी सेवा करता है, वह प्रकृति के तीनों गुणों को लाँघकर ब्रह्मभूत अवस्था को प्राप्त करता है।

30. ***ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च।***
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च॥

(गीता 14–27)

जो निराकार ब्रह्म अमृत, अविनाशी व शाश्वत धर्म स्वरूप व आनन्द स्वरूप है; निश्चय ही मैं उसका आश्रय हूँ।

31. ***न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः।***
यद्गत्वा न निर्वतन्ते तद्धाम परमं मम॥

(गीता 15–6)

जो स्थान सूर्य, चन्द्रमा व अग्नि के द्वारा प्रकाशित नहीं होता, जहाँ तक जाकर वापस लौटना नहीं पड़ता; वही मेरा परमधाम है।

32. ***ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।***
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति॥

(गीता 15–7)

संसार में प्रत्येक देह में स्थित जीव मेरा ही सनातन अंश है, जो मन सहित छः इन्द्रियों के माध्यम से प्रकृति के अधीन रहकर कार्य करता है।

33. ***सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो***
मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो
वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम्॥

(गीता 15–15)

मैं समस्त देहधारियों के हृदय में अर्न्तयामी परमात्मा रूप से स्थित हूँ, मेरे द्वारा ही सब जीवों को अपने आत्मस्वरूप की स्मृति, आत्मज्ञान और जगत की विस्मृति होती है। समस्त वेदों का उद्देश्य मुझे ही जानना है, मैं ही वेदों का संकलनकर्ता और समस्त वेदों का ज्ञाता भी हूँ।

34. ***यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमम्।***
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत॥

(गीता 15–19)

हे भरतवंशी अर्जुन! जो व्यक्ति संशय रहित होकर मुझे इस प्रकार पुरुषोत्तम भगवान के रूप में जान लेता है, वह मुझ सर्वज्ञ की पूर्ण समर्पण के साथ भक्ति करता है।

35. ***मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।***
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे॥

(गीता 18–65)

अपना मन मुझमें आसक्त करो, मेरे भक्त बनो, मेरी पूजा करो और मुझे प्रणाम करो। तुम मेरे प्रिय हो, इसलिए मैं तुमसे सत्य प्रतिज्ञापूर्वक कहता हूँ कि ऐसा करने से तुम मुझे ही प्राप्त करोगे।

36. ***सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।***
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो: मोक्षयिष्यामि मा शुच:॥

(गीता 18–66)

समस्त प्रकार के धर्मों का परित्याग करके एकमात्र मेरी शरण ग्रहण करो, मैं तुम्हें समस्त पापों से मुक्त करूँगा; शोक मत करो।

❖ ❖ ❖

सदा जपिए

जय श्री कृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द
श्री अद्वैत गदाधर श्री वासादि गौर भक्तवृन्द

(1 बार)

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे

(108 बार)